WWW.IJRPR.COM

International Journal of Research Publication and Reviews

Journal homepage: www.ijrpr.com ISSN 2582-7421

स्वयं सहायता समूह का ग्रामीण आर्थिकी में योगदान

लक्ष्मीनिधि विश्वकर्मा[1], डॉ. प्रीती शुक्ला[2]

[1]शोधार्थी, वाणिज्य और प्रबंधन विभाग, डॉ. सी. व्ही. रमन विश्वविद्यालय, करगीरोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.)

[2]सह प्राध्यापक, वाणिज्य और प्रबंधन विभाग, डॉ. सी. व्ही. रमन विश्वविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.)

सारांश रू

भारत एक ग्रामीण प्रधान राष्ट्र है और इसका समग्र उन्नयन तभी संभव है जब हमारे गांव आत्मनिर्भर बन जाएं। हमारी केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा इस दिशा में निरंतर अनेक योजनाएं संचालित की जा रही हैं, तथापि स्वतंत्रता के 77 वर्षों उपरांत भी हम सशक्त ग्राम व्यवस्था की स्थापना में पूरी तरह सफल नहीं हो सके हैं। इसी दिशा में केंद्र व राज्य शासन वर्तमान ग्रामीण हालातों को दृष्टिगत रखते हुए नवीन योजनाओं की प्रभावशाली क्रियान्वयन प्रक्रिया हेतु स्वयं सहायता समूहों की अवधारणा को आवश्यक मानते हैं, और इसी कारण अब अधिकांश ग्रामीण अंचलों में अधिक से अधिक स्वयं सहायता समूह गठित करने के भरसक प्रयास किए जा रहे हैं। उत्तर भारत की तुलना में दक्षिण भारत में इसके सकारात्मक परिणाम परिलक्षित होने लगे हैं। इससे ग्रामीण अंचलों की महिलाओं की आर्थिक दशा में बदलाव की एक नई दिशा मिली है। प्रस्तुत शोध आलेख में हमने रायपुर जनपद के कुछ गांवों का विश्लेषण करते हुए स्वयं सहायता समूहों की अवधारणा से ग्रामीण तंत्र में हो रहे परिवर्तनों को समझने का प्रयास किया है। इस अध्ययन से यह भी प्रत्यक्ष हुआ है कि यदि इस संकल्पना को और व्यापक रूप में विस्तार दिया जाए तो इसके निष्कर्ष और भी लाभदायक सिद्ध हो सकते हैं।

मुख्य शब्द : स्वयं सहायता समूह, ग्रामीण, आर्थिक परिवर्तन।

1. प्रस्तावना

आज जो ग्रामीण समाज का ढांचा हमारे सामने उपस्थित है, वह प्रारंभ से वैसा नहीं था। प्रारंभिक काल से वर्तमान तक ग्रामीण सामुदायिक संरचना कई कालखंडों को पार करते हुए आज इस स्थिति में पहुंची है। प्राचीन ग्रामीण सामाजिक संरचना पूर्व वैदिक युग से लेकर मुगल शासन तक अनेक सम्राटों और राजवंशों के अधीन रहते हुए भी कुछ मामूली बदलावों को छोड़कर लगभग अपरिवर्तित बनी रही। मुगल सत्ता के पराभव के उपरांत भारत पर अंग्रेजी सत्ता का अधिकार हो गया। अंग्रेजी हुकूमत के विस्तार के साथ ही हमारी आत्मनिर्भर ग्रामीण आर्थिक प्रणाली दुर्बल होती चली गई। ब्रिटिश प्रशासन द्वारा लगाए गए विविध करों का सीधा प्रभाव ग्रामीण समाज पर पड़ा, और जनसंख्या में वृद्धि के चलते कृषि भूमि पर बोझ और अधिक बढ़ गया। इसके अतिरिक्त, ग्रामीण सामाजिक संरचना पर सबसे गहरा असर औद्योगिक क्रांति ने डाला, जहाँ अब अधिकांश कार्य जनशक्ति की बजाय यंत्रों द्वारा संपन्न होने लगे। मशीनों से उत्पादित वस्तुएं सस्ते दामों पर उपलब्ध होने लगीं, जिससे लघु एवं कुटीर उद्योगों का पतन प्रारंभ हो गया और बेरोजगारी की दर में तीव्र वृद्धि हुई।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात, 1950 से भारत सरकार राष्ट्रीय उन्नति और विकास हेतु पंचवर्षीय योजनाओं का निर्माण करती रही, जिनमें ग्रामीण उन्नयन को सदैव प्राथमिकता दी गई। इन योजनाओं के अंतर्गत अनेक कार्यक्रम आरंभ किए गए जैसेकृसमन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ग्रामीण युवाओं के लिए स्व–रोजगार प्रशिक्षण (ट्राइसम), ग्रामीण क्षेत्र में महिला एवं बाल कल्याण कार्यक्रम (द्वाकरा), ग्रामीण कारीगरों को उन्नत उपकरण किट की आपूर्ति योजना (सिट्रा) आदि। हालांकि सरकार द्वारा ग्रामीण उन्नति के लिए बहुसंख्यक योजनाएं चलाई गईं, किंतु कुछ दशकों पश्चात जब मूल्यांकन हुआ तो ज्ञात हुआ कि इन योजनाओं का पूरा लाभ ग्रामीण जनता तक नहीं पहुँच पाया।

इस स्थिति को सुधारने हेतु 1990 के दशक में सरकार ने नए प्रयास किए और पूर्व कमियों को दूर करते हुए ताज़ा योजनाओं की शुरुआत की। इनमें 1993 की रोजगार गारंटी योजना, 1995 का राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम, 1999 की स्वर्ण जयंती ग्राम स्व–रोजगार योजना तथा जवाहर ग्राम समृद्धि योजना प्रमुख थीं। इस बार सरकार ने इन योजनाओं को अधिक कारगर बनाने और विस्तृत जानकारी ग्रामीण लोगों तक पहुँचाने का दायित्व गैर–सरकारी संस्थाओं तथा स्वयं सहायता समूहों को सौंपा। वर्तमान में ग्रामीण उन्नयन में इन स्वयं सहायता समूहों की भागीदारी प्रत्यक्ष रूप से देखी जा सकती है।

अब सबसे पहले यह समझना आवश्यक है कि समूह क्या होता है। सामान्यतः समूह का अर्थ हैकृजब दो या दो से अधिक व्यक्ति किसी स्थान पर इकट्ठा होते हैं और जिनमें पारस्परिक सामाजिक अंतःक्रिया होती है। इसे संगठित समूह भी कहा जा सकता है। यदि हम स्वयं सहायता समूह की बात करें तो यह परंपरागत समूहों से भिन्न होता है। सरल शब्दों में कहें तो स्वयं सहायता समूह 1 से 20 सदस्यों का ऐसा संगठन होता है जो समाज के कमजोर वर्गों के सामाजिक और आर्थिक सशक्तिकरण के उद्देश्यों पर केंद्रित होता है।

2. स्वयं सहायता समूहः अर्थ, परिभाषा एवं विकास

स्वयं सहायता समूह अर्थात् श्स्वयं के लिए सहायता करनाश कृ जैसा कि नाम से स्पष्ट होता है, यह ऐसा समूह होता है जिसमें दो या दो से अधिक व्यक्ति आपसी सहयोग की भावना से एकत्रित होते हैं और कुछ विशेष उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु पूर्व निर्धारित नियमों का अनुसरण करते हुए परस्पर संवाद व क्रियाशीलता में संलग्न होते हैं। दूसरे शब्दों में कहें तो यह निम्न आयवर्ग एवं निम्न मध्यमवर्ग के लोगों द्वारा अपने सामाजिक सशक्तिकरण के उद्देश्य से गठित एक ऐसा स्वैच्छिक संगठन होता है, जो सदस्यों की सूक्ष्म बचतों के माध्यम से उन्हें जीविका के साधनों में सुधार हेतु प्रेरणा व समर्थन प्रदान करता है।

स्वयं सहायता समूह की कई प्रकार से व्याख्या की गई है, जिनमें से कुछ प्रमुख परिभाषाएं निम्नानुसार हैंरू

1. जब किसी विशेष क्षेत्र के लोग सामाजिक उत्थान के कार्यों हेतु किसी सरकारी सहायता पर निर्भर हुए बिना मिल–जुलकर आगे आते हैं और उस समूह के प्रति स्वामित्व की भावना रखते हैं, तो ऐसे संगठन को स्वयं सहायता समूह कहा जाता है।[6]
2. जब समाज के लोग अपनी समस्याओं की पहचान कर उनके निराकरण हेतु उपलब्ध संसाधनों या बाह्य स्रोतों से संभावित सहायता की योजना बनाकर सामूहिक रूप से विचार करते हैं और इस दृष्टि से एक समूह बनाते हैं, तो वह स्वयं सहायता समूह कहलाता है।[6]
3. ऐसे संगठन की रचना जिसमें सम्मिलित सदस्यों को यह पूरी जागरूकता हो कि वह समूह उन्हीं का स्वनिर्मित है और उसका अधिकार उन्हीं के भीतर निहित है, वह स्वयं सहायता समूह होता है।[6]

अंततः कहा जा सकता है कि स्वयं सहायता समूह का अभिप्राय ऐसे व्यक्तिगत नागरिकों के संघ से है, जो सामाजिक और आर्थिक स्तर पर अपनी सहायता स्वयं करने का संकल्प लेते हैं तथा अपने सदस्यों में लघु बचत की भावना विकसित कर उन्हें आत्मनिर्भर बनने की दिशा में सचेत करते हैं।

3. स्वयं सहायता समूह की संकल्पना का विकास

सबसे पहले वर्ष 1975 में बांग्लादेश के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री प्रोफेसर मोहम्मद यूनुस ने निम्नवर्गीय समाज के उत्थान को ध्यान में रखते हुए छोटे स्तर के उद्यमियों, बुनकरों, रिक्शा चालकों और लघु दुकानदारों को एकत्रित कर संगठित किया तथा आपसी सहयोग की भावना से समूह बनाकर एक–दूसरे की सहायता करने हेतु प्रेरित किया। यही अवधारणा आगे चलकर भारत में स्वयं सहायता समूह के नाम से विख्यात हुई। यदि हम भारत के संदर्भ में बात करें, तो वर्ष 1984–85 में मैसूर पुनर्वास और विकास एजेंसी (मायराड़ा) ने ग्रामीण गरीबी के आधारभूत कारणों का विश्लेषण करते हुए यह निष्कर्ष निकाला कि निर्धनता का मुख्य कारण कर्ज पर अत्यधिक निर्भरता है। अतः इस समस्या के समाधान हेतु मायराड़ा ने गरीबों द्वारा संचालित एक वैकल्पिक ऋण व्यवस्था को अपनाने का निर्णय लिया और 1985 से इस दिशा में अपना कार्य आरंभ किया। जब 1987 में नाबार्ड की अनुसंधान एवं विकास अनुदान प्राप्त हुई, तब तक इसे श्क्रेडिट प्रबंधन समूहश के नाम से जाना जाता था। बाद में, समूह के सदस्यों द्वारा सुझाए गए नाम के अनुसार इसे श्स्वयं सहायता समूहश कहा गया और मायराड़ा को भारत में स्वयं सहायता समूहों की नींव रखने वाला संस्थान माना गया।

4. स्वयं सहायता समूह का गठन

स्वयं सहायता समूह की धारणा वस्तुतः एक सतत विकास प्रक्रिया है, जो समाज के निम्न आय वर्ग के व्यक्तियों को संगठित कर उन्हें आत्मविकास के लिए प्रेरित करती है। इस प्रक्रिया में समान आर्थिक स्थिति वाले लोगों को छोटे–छोटे दलों में विभाजित कर एकजुट करने का प्रयास किया जाता है। ये सदस्य नियमित रूप से अल्प मात्रा में धन की बचत कर एक सामूहिक निधि का निर्माण करते हैं, जिससे आवश्यकता पड़ने पर समूह के सदस्य अत्यंत कम ब्याज दर पर आपात ऋण प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि समूह की स्थापना से निम्न वर्ग को संचय के लिए प्रेरित किया जाता है। प्रायः एक स्वयं सहायता समूह में 5 से 25 सदस्य हो सकते हैं। समूह निर्माण में मुख्यतः बीपीएल परिवारों की महिलाओं को सम्मिलित करने पर विशेष बल दिया जाता है। खण्ड विकास कार्यालय द्वारा एक समूह की स्थापना हेतु ₹10,000 की वित्तीय सहायता भी प्रदान की जाती है। समूह की महिलाएँ लोकतांत्रिक प्रणाली के अनुसार अपने समूह की अध्यक्ष का चयन करती हैं। इनका प्रमुख उद्देश्य अपने गांव में सामाजिक और आर्थिक बदलाव लाना या परिवर्तन की प्रक्रिया में एक कड़ी के रूप में कार्य करना होता है। इसके अंतर्गत वे आपसी सहयोग, संचय की प्रवृत्ति, वित्तीय संस्थानों से ऋण लेकर उद्यमिता संवर्द्धन जैसे कार्यों को बढ़ावा देती हैं। स्वयं सहायता समूह के प्रमुख उद्देश्य निम्न हैं:

1. समूह की कुशल कार्यप्रणाली के लिए एक नियम संहिता का निर्माण करना।
2. कमजोर आर्थिक वर्ग को आत्मनिर्भर बनाने हेतु संचय की आदत को बढ़ावा देना।
3. सदस्यों में समरसता और संगठन की चेतना उत्पन्न करना।
4. जातिगत भेदभाव से ऊपर उठकर समन्वित रूप से कार्य करने हेतु प्रेरित करना।

कोई भी स्वयं सहायता समूह विशिष्ट लक्ष्यों के आधार पर गठित होता है। इसके उद्देश्यों के अनुरूप यह या तो एक आर्थिक समूह होता है या सामाजिक समूह। जब किसी समूह की स्थापना मुख्यतः अपने सदस्यों की वित्तीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए की जाती है तो उसे आर्थिक स्वयं सहायता समूह कहा जाता है, जिसे कई बार 'संचय एवं ऋण समूह' भी कहा जाता है। इसी प्रकार, जब समूह की रचना सामाजिक आवश्यकताओं की पूर्ति या सामाजिक प्रगति के मापदंडों को स्थापित करने हेतु की जाती है, तो उसे सामाजिक स्वयं सहायता समूह कहा जाता है। यह जानने के लिए कि क्या वास्तव में स्वयं सहायता समूहों ने ग्रामीण अर्थव्यवस्था में कोई ठोस परिवर्तन लाया है या पूर्व में किए गए अध्ययन पर्याप्त नहीं हैं, हमने अपने विश्लेषण में तीन मुख्य बिंदुओं पर ध्यान केंद्रित कियारू

1. आय का स्तर
2. स्वास्थ्य और शिक्षा की स्थिति
3. विकास कार्यक्रमों में सहभागिता

तालिका–1 में उस क्षेत्र की जानकारी दी गई है जहाँ शोधकर्ता द्वारा यह अध्ययन किया गया। तालिका–2 में यह दर्शाने का प्रयास किया गया है कि अधिकतर सदस्यों की स्वयं सहायता समूह से जुड़ने की प्राथमिक मंशा क्या थी। आंकड़ों और सूचनाओं के विश्लेषण से यह स्पष्ट होता है कि अधिकांश व्यक्तियों का उद्देश्य आर्थिक सहायता प्राप्त कर अपनी बचत को बढ़ाना था।

तालिका–1

क0सं0	ग्राम का नाम	स्वंय सहायता समूह की संख्या	कुल सदस्य
1	गिधौरी	5	45
2	कांदुल	6	54
3	मुर्रा	4	40
		15	139

तालिका–2

क0सं0	एस0एच0जी0 से जुड़ने का कारण	प्रतिभागियों की संख्या	प्रतिशत
1	ऋण हेतु	6	30
2	बचत हेतु	7	35
3	समाजिक स्तर वृद्धि हेतु	2	10
4	अन्य कारण	5	25
		20	25

5. आय स्तर में परिवर्तन

सर्वेक्षण के दौरान हमने अध्ययन हेतु चयनित ग्रामों की उन महिलाओं की आय में हुए बदलाव का मूल्यांकन करने का प्रयास किया जो स्वयं सहायता समूहों से संबद्ध थीं। सर्वेक्षण के उपरांत प्राप्त आँकड़ों के आधार पर तालिका–3 का निर्माण किया गया है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए प्रश्नावली में हमने आय मापन हेतु पाँच श्रेणियाँ निर्धारित की थीं। तालिका से यह स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है कि स्वयं सहायता समूह से जुड़ने के उपरांत महिलाओं की आय में कुछ हद तक वृद्धि देखने को मिली है। साक्षात्कार के दौरान यह जानकारी सामने आई कि अधिकांश सदस्यों ने दुग्ध उत्पादन हेतु पशुधन क्रय के लिए ऋण लिया और इस प्रकार अपने आय के स्रोत को सुदृढ़ करने का प्रयास किया। ग्राम की कुछ महिलाएँ ऐसी भी पाई गईं, जिनके पास स्वयं सहायता समूह से जुड़ने से पूर्व कोई आय का माध्यम नहीं था, किंतु समूह का हिस्सा बनने के पश्चात उन्होंने अपने लिए आजीविका का जरिया निर्मित किया। तालिका से यह तथ्य स्पष्ट होता है कि स्वयं सहायता समूहों की स्थापना से ग्रामीण महिलाओं ने सशक्तिकरण की दिशा में निश्चित ही एक ठोस कदम उठाया है तथा इसके माध्यम से आर्थिक प्रगति की असीम संभावनाएँ विद्यमान हैं।

तालिका–3 (सदस्यों के आय स्तर में परिवर्तन)

क0सं0	मसिक आय	एस0एच0जी0 से जुड़ने से पूर्व		एस0एच0जी0 से जुड़ने के बाद	
		प्रतिभागियो की संख्या	प्रतिशत	प्रतिभागियो की संख्या	प्रतिशत
1	1000 से कम	1	3.00	0	0
2	1000–2000 के मध्य	16	53.56	11	36.63
3	2000–3000 के मध्य	6	19.96	9	29.97
4	3000–4000 के मध्य	3	9ण्99	8	26.64
5	नही कमाने वाले	4	13.32	2	6.66
		30	100	30	100

6. स्वास्थ्य एवं शिक्षा के स्तर में परिवर्तन

तालिका–4 के विश्लेषण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला गया है कि इन ग्रामों में स्वास्थ्य कार्यक्रमों में सहभागिता सुनिश्चित करने, महिलाओं को स्वास्थ्य संबंधी सेवाएं उपलब्ध कराने और उनमें इसके प्रति चेतना विकसित करने में स्वयं सहायता समूहों ने एक उल्लेखनीय भूमिका निभाई है। इन समूहों के माध्यम से महिलाओं की भागीदारी तथा स्वास्थ्य जागरूकता में निश्चित रूप से वृद्धि दर्ज की गई है, किंतु संवाद के दौरान एक महत्वपूर्ण तथ्य यह भी सामने आया कि आज भी साक्षरता का वास्तविक स्तर अपेक्षित नहीं है, जिसके कारण समूहों के द्वारा किए जा रहे कौशल उन्नयन संबंधी प्रयासों की गति तुलनात्मक रूप से धीमी प्रतीत होती है। कई समूह सदस्य अब भी 'कुछ कह पाने में असमर्थता' जैसी स्थिति में पाए गए।

7. विकास योजनाओं मे भागीदारी

सामान्यतः जब हम विविध विकास योजनाओं में ग्रामीण महिलाओं की सहभागिता पर विचार करते हैं, तो यह परिलक्षित होता है कि पूर्व में अधिकांश ग्रामीण महिलाएं घर की चारदीवारी तक ही सीमित रहती थीं। जो महिलाएं घर से बाहर निकलकर कृषि कार्यों में पुरुषों का सहयोग करती थीं, उनके श्रम को भी विशेष मान्यता प्राप्त नहीं थी। किंतु जब से वे स्वयं सहायता समूहों से जुड़ी हैं, उनके द्वारा घरेलू आर्थिक व्यवस्था में दिए गए योगदान को भी महत्त्व मिलने लगा है। इसका सकारात्मक प्रभाव यह रहा है कि अब ग्रामीण महिलाएं भी घर की सीमा से बाहर आकर सरकारी एवं गैर–सरकारी विकास योजनाओं की जानकारी प्राप्त करने के लिए विशेष रूप से तत्पर रहती हैं। इसके अतिरिक्त, विभिन्न संस्थानों द्वारा समय–समय पर संचालित किए जाने वाले प्रशिक्षण कार्यक्रमों में भी महिलाओं की भागीदारी में उल्लेखनीय वृद्धि देखी गई है। अतः यह कहा जा सकता है कि स्वयं सहायता समूहों से जुड़कर और छोटी–छोटी बचतों के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं ने न केवल विकास योजनाओं में अपनी सक्रिय उपस्थिति दर्शाई है, बल्कि इन योजनाओं के प्रभावी क्रियान्वयन में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। उपर्युक्त तालिकाओं और उनके विश्लेषण से यह निष्कर्ष निकलता है कि वर्तमान में विकास योजनाओं में ग्रामीण महिलाओं की भागीदारी निरंतर बढ़ रही है, जो एक सकारात्मक और सफल आरंभ के रूप में मानी जा सकती है।

तालिका–4 (एस0एच0जी0 का सामाजिक–आर्थिक कारकों पर प्रभाव)

क्र0सं0	सामाजिक–आर्थिक कारक	अपरिवर्तित है	वृद्धि हुई है	कुछ कह नहीं सकते की स्थिति में	कुल
1	गति"ीलता	10	20	0	30
2	परिवार में मान्यता	10	15	5	30
3	बाहरी व्यक्ति से संवाद	10	18	2	30
4	कौ"ोलता वृद्धि	5	10	15	30
5	स्वास्थय चेतना का विकास	5	25	0	30
6	टीकाकरण के प्रति जागरुकता वृद्धि	8	10	12	30
7	परिवार कल्याण कार्यक्रम के प्रति जागरुकता	6	8	16	30
8	विकास कार्यों में भागीदारी	5	22	3	30

8. निष्कर्ष

अतः इस अनुसंधान से प्राप्त तथ्यों के विश्लेषण से यह स्पष्ट रूप से सामने आता है कि स्वयं सहायता समूहों ने ग्रामीण अंचलों में विकासात्मक गतिविधियों में जनसहभागिता को निश्चित रूप से बढ़ाया है। अन्य शब्दों में कहें तो, इस प्रणाली के माध्यम से ग्रामीण भारत में जो जागरूकता का अभाव परिलक्षित हो रहा था, उसे सशक्त रूप से सक्रिय करने में सफलता प्राप्त हुई है। हालांकि, यह भी अनुभव किया गया है कि इस क्षेत्र में योजनाओं के क्रियान्वयन को और अधिक दृढ़ता तथा पारदर्शिता के साथ लागू करने की आवश्यकता अब भी बनी हुई है।

9. संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. वर्मा, एस. (2010). विकासशील दे"ाों में महिलाओं की आर्थिक स्थिति. *इंडियन जर्नल ऑफ रिसर्च,* पृ 132–139
2. उषा, एम. (2011). महिलाओं की पारिवारिक जिम्मेदारी एवं आर्थिक संघर्ष. *कुरूक्षेत्र,* पृ 38–43
3. शुक्ला, एच. (2011). ग्रामीण बैंक एवं महिलाओं की सहभागिता. *इंडियन जर्नल आफ सो"ाल साइंसेस एंड डेवलपमेंट,* पृ 59–64
4. दास, वी. (2014). भारतीय परिपेक्ष्य में स्व सहायता समूहों की उपयोगिता. *कुरूक्षेत्र,* पृ 64–68
5. नरसिम्हन, वी. (2017). आंध्रप्रदे"ा में कौ"ाल योजना का स"ाक्तिकरण पर पड़ता प्रभाव. *इंडियन जर्नल ऑफ सो"ाल चैलजें`स*

6. प्रका'ो, एम. (2018). लघु ऋण योजनाएँः ग्रामीण भारत की उभरती तकदीर. *इंडियन जर्नल ऑफ रिसर्च,* पृ 122–126
7. सिंह, एस. (2020). हरियाणा में स्व सहायता समूह एवं आर्थिक सुधार. *सामाजिक शोध पत्रिका,* पृ 52–55
8. शारदा, के. (2021). महिलाओं की प्रबंधकीय क्षमता एवं स'ोक्तिकरण. *भारतीय सामाजिक शोध,* पृ 126–131
9. शाह, एम. (2021). बैंकिग में महिलाओं की भागीदारी. *कुरूक्षेत्र,* पृ 71–74
10. मायराडा, एच. (2021). स्व सहायता समूह एवं महिलाओं की बदलती सोच. *जर्नल ऑफ सो''ाल अफेयर्स,* पृ 13–19